International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(1): 69-71

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(1): 69-71
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 04-11-2015
Accepted: 07-12-2015

डॉ0 कुमर पाल
सहायकाचार्य, संस्कृत विभाग,
श्री ब्रजेन्द्र जनता महाविद्यालय
बिसावर, हाथरस, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ0 कुमर पाल
सहायकाचार्य, संस्कृत विभाग,
श्री ब्रजेन्द्र जनता महाविद्यालय
बिसावर, हाथरस, उत्तर प्रदेश, भारत

मनुस्मृति एवं याज्ञवल्क्यस्मृति के अनुसार ब्रह्मचारी के दैनिक कार्यों का विवेचन

डॉ0 कुमर पाल

प्रस्तावना

स्मृतिकार मनु ने विश्वविख्यात मनुस्मृति में ब्रह्मचर्य आश्रम का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है। मनु ने ब्रह्मचर्य आश्रम ग्रहण करने से पूर्व उपनयन संस्कार का विवेचन किया है जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की आयु 8, 11 और 12 बताई गई।

गर्भाश्टमेऽब्दे कुर्वीत् ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकाषे राज्ञो गर्भान्त द्वादषेविषः।।[1]

ब्रह्मचारी की वेशभूषा के विषय में मनुस्मृति में कहा गया है कि ब्रह्मचारियों को कृष्णमृग, रूरूमृग, बकरे का चमड़ा, उत्तरीय के स्थान पर धारण करना चाहिए और वर्णक्रम से सन् (टाट), तीसी के सूत का कपड़ा और ऊन का वस्त्र धारण करना चाहिए।[2]

मेखला के विषय में मनुस्मृति में कहा गया है कि तीन फेरे वाली चिकनी मूँज की मेखला ब्राह्मण ब्रह्मचारी की, क्षत्रिय ब्रह्मचारी की मूर्वा की प्रत्यचा और वैश्य ब्रह्मचारी की सन् की बनी मेखला होनी चाहिए। यज्ञोपवीत के विषय में मनु का कहना है कि ब्राह्मण का कपास के सूत का, क्षत्रिय का सन् का सूत का और वैश्य का भेड़ के सूत का यज्ञोपवीत होना चाहिए और वह तिहरा तथा दाहिने से बँटा होना चाहिए। ब्राह्मण का दण्ड बैल या पलाश का, क्षत्रिय का बड या खैर का और वैश्य का पीलू या गूलर का होना चाहिए।[3] ब्राह्मण का दण्ड उसको खड़ा कर उसके पैर से शिखा के अग्रभाग तक का लम्बा, क्षत्रिय का कपाल तक और वैश्य का नाक तक लम्बा होना चाहिए। सभी दण्ड सीधे, छिद्र रहित, देखने में सुन्दर, चित्त को प्रसन्न करने वाले, त्वचा से गौर और जले न हों।

ब्रह्मचारी के भिक्षा कर्म का भी विशद् विवेचन मनुस्मृति में देखने को मिलता है। मनु ने कहा है कि ब्रह्मचारी अपने–अपने अभीष्ट दण्ड को धारण कर और सूर्य का उपस्थापन करके[4] अग्नि परिक्रमा करके नियम के अनुसार भिक्षा मांगे। भिक्षा मांगते समय ब्राह्मण माँगने वाले से पहले भवत् शब्द का प्रयोग करे, जैसे 'भवति भिक्षां मे देहि'। क्षत्रिय मध्य में भवत् शब्द का प्रयोग करे, जैसे 'भिक्षां भवति मे देहि' वैश्य अन्त में भवत् शब्द का प्रयोग करे। जैसे– 'भिक्षां देहि मे भवति'।[5] भिक्षां सबसे पहले अपनी माता या मौसी या बहिन से अथवा किसी अन्य से जो अपमान न करे, मांगनी चाहिए।[6] भिक्षा को लाकर ब्रह्मचारी को निष्कपट होकर गुरू को निवेदन कर पूर्वाभिमुख पवित्र होकर आचमन करके भोजन करना चाहिए।[7] पहले जल से तीन बार आचमन करे। इसके बाद आँख, कान, नाक और अपने मस्तिष्क का स्पर्श करे। आचमन के जल के हृदय तक जाने से ब्राह्मण शुद्ध होता है। कण्ठ तक जाने से क्षत्रिय शुद्ध होता है। मुँह में जाने से वैश्य शुद्ध होता है और केवल ओठों के लगाने से शूद्र शुद्ध होता है।[8]

मनु ने कहा है कि ब्राह्मण का 26वें वर्ष में, क्षत्रियों का 22वें वर्ष में और वैश्य का 24वें वर्ष में केशान्त संस्कार करना चाहिए।[9] ब्रह्मचारी के अध्ययन के विषय में मनुस्मृति में कहा गया है कि वेद के व्याकरणादि उपकरण, वेद पाठादि नित्य के स्वाध्याय, हवन और मंत्र जप नित्य करने चाहिए।[10] जो स्थिर चित्त से पवित्र होकर विधि पूर्वक एक वर्ष तक वेदाध्ययन करता है, उसको नित्य ही दूध, दही, घी मधु नित्य प्राप्त होता है।[11]

मनु के अनुसार उपवीत द्विज को समिधाओं से हवन, भिक्षा मांगना, पृथ्वी पर सोना तथा गुरू की सेवा वेदाध्ययन पर्यन्त करनी चाहिए–

अग्नान्धीनं भैक्षचर्यामधःषय्यां गुरोर्हितम्।
आसमावर्त्तनात् कुर्यात् कृतोपनयनो द्विजः।।[12]

मनु के अनुसार जिस शैय्या और आसन पर गुरू बैठे उस पर कभी नहीं बैठना चाहिए। सदैव शैय्या और आसन से उठकर गुरू को प्रणाम करना चाहिए।[13]

मनुस्मृति में ब्रह्मचर्य आश्रम में ब्रह्मचारी का तृतीय जन्म मानते हुए कहा गया है कि द्विज का प्रथम जन्म माता से, द्वितीय यज्ञोपवीत के समय और तृतीय यज्ञ दीक्षा के समय होता है। इनमें यज्ञोपवीत से चिन्हित जन्म में माता गायत्री और पिता आचार्य होता है। वेद की शिक्षा देने से आचार्य को पिता कहते हैं क्योंकि यज्ञोपवीत होने के पहले किसी भी वैदिक कार्य करने की क्षमता द्विज में नहीं होती।[14] मनु के अनुसार अनुपनीत द्विज वेदमंत्र का उचारण न करें, क्योंकि जब तक वेदारम्भ न हो जावे, वह शूद्र के समान होता है। यज्ञोपवीत हो जाने पर वटु को व्रत का उपदेश लेकर विधि पूर्वक वेदाध्ययन करना चाहिए। जिस वटु के लिए जो धर्म, सूत्र, मेखला, दण्ड और वस्त्र उपनयन में विहित है, वही व्रतों में में भी विहित है।[15]

ब्रह्मचारी के दैनिक कर्मों को बतलाते हुए मनु स्मृति में कहा गया है कि बृह्मचारी नित्य स्नान करके पवित्र होकर देवता और ऋषियों का तर्पण करे। मधु, मांस, सुगन्ध, माला, रस, स्त्री, सभी प्रकार के आसव और प्राणियों की हिंसा को त्याग दे।[16] ब्रह्मचारी शरीर में उवटन और आँखों में अंजन न लगावे, जूता और छाता धारण न करे, काम, क्रोध और लोभ न करे, नाच, गाना और बाजे से दूर रहे–

अभ्यंगमंजनं चाक्ष्णोरूपानच्छत्रधारणम्।
कामं क्रोधं च लाभं च नर्तनं गीतवादनम्।।[17]

मनुस्मृति में कहा गया है कि ब्रह्मचारी को जुआ, कलह निन्दा, झूठ, स्त्रियों को सकाम दृष्टि से देखना और उन्हें आलिंगन करना तथा दूसरे की निन्दा को त्याग देना चाहिए।[18]

ब्रह्मचारी सदैव अकेला सोवे, कभी वीर्यपात न करे। यदि अनिच्छा से ब्रह्म में वीर्यपात हो जावे तो, स्नान कर सूर्य का पूजन कर तीन बार जप करे।[19] मनु के अनुसार जो वेद और यज्ञों में फंसे हों और अपने धर्म–कर्म में श्रेष्ठ हो, ऐसे गृहस्थ के घर से प्रतिदिन भिक्षा लावे।

वेदयज्ञैरहीनानां प्रषस्तानां स्वकर्मसु।
ब्रह्मचार्याहरेदभैक्षं गृहेभ्यः प्रयतोन्वहम्।।[20]

ब्रह्मचार्या दूर से संमिधा लाकर उसे ऊपर रख दे और साथ प्रातःकाल आलस्य रहित होकर अग्नि में हवन करे।[21] उसे नित्य भिक्षा करनी चाहिए। एक ही अन्न को खाकर नहीं रहना चाहिए।[22]

मनुस्मृति के अनुसार ब्रह्मचारी को गुरू के कहने अथवा न कहने पर भी नित्य वेदाध्ययन करना चाहिए तथा आचार्य की सेवा में यत्नशील होना चाहिए। मनुस्मृति में कहा गया है कि ब्रह्मचारी को शरीर, वाणी, बुद्धि, इन्द्रिय और मन को नियन्त्रण में रखकर, हाथ जोड़कर गुरू के मुख को देखकर स्थिर रहना चाहिए। सुन्दर वेश और आचरण से युक्त होकर हमेशा दाहिना हाथ बाहर रखकर गुरू के कहने पर सम्मुख बैठना चाहिए। गुरू के समीप हमेशा गुरू से न्यून भोजन, वस्त्र और वेश में रहे। गुरू के सोकर जागने से पहले जागे और सोने के बाद सोये।[23] सोये हुए, बैठे हुए, भोजन करते हुए, मुँह फेरकर खड़े हुए गुरू से संभाषण न करे। यदि गुरू बैठे हों तो स्वयं उठकर, खड़े हों तो सामने जाकर, आते हों तो सम्मुख चलकर, चलते हों तो पीछे दौड़कर, गुरू की आज्ञा सुननी चाहिए। गुरू मुंह फेरकर खड़े हों तो सामने जाकर, दूर हों तो समीप जाकर, सोये हों तो प्रणाम करे, समीप बैठे हों तो सिर नीचे करके बात सुननी चाहिए।[24]

मनु के अनुसार शिष्य को हमेशा गुरू के समीम शैया और आसन उनसे नीचे रखना चाहिए। गुरू के सामने अपनी इच्छा के अनुसार आसन पर नहीं बैठना चाहिए।[25] जहॉ गुरू का उपहास हो, वहां से या तो जाये या अपने कान बन्द कर ले, क्योंकि गुरू के उपहास से मरने पर गधा, निन्दा करने से कुत्ता, उसकी सम्पत्ति का भोग करने से कृमि और ईर्ष्या करने से कीड़ा होता है।[26]

ब्रह्मचारी के लिए अन्य माता–पिता आदि गुरुजनों के प्रति व्यवहार की शिक्षा प्रदान करते हुए मनु ने कहा है कि गुरू के समीप यदि गुरू हो, तो उनके साथ गुरू के समान व्यवहार करे। गुरू की आज्ञा लेकर ही माता–पिता गुरुजनों को प्रणाम करें।[27] विद्या सिखाने वाले गुरू साथ, अधर्म से बचाने वाले अपने से बड़े सम्बन्धी तथा हितकारी शिक्षा देने वाले के साथ गुरू के समान ही व्यवहार करना चाहिए।[28] इनके अतिरिक्त अपने से श्रेष्ठजन, पूज्य गुरुपुत्र और गुरू के कुटम्बियों के साथ गुरू के समान ही व्यवहार करना चाहिए।[29]

गुरू पुत्र के साथ ब्रह्मचारी के व्यवहार को बतलाते हुए मनु ने कहा है कि गुरू का पुत्र उम्र में अपने से छोटा हो अथवा समान हो यदि अध्यापन के योग्य है, तो यज्ञ कर्म में वह गुरू के समान ही सम्मान के योग्य है–

बालः समानजन्मा वा षिश्यो वा यज्ञकर्मणि।
अध्यापयन्गुरूसुतो गुरूवन्मानमर्हति।।[30]

इतना अवश्य है कि गुरू के पुत्र को मलना, नहलाना और उसका जूठा नहीं खाना चाहिए। उसके पैरों को नहीं धोना चाहिए।[31] गुरू पत्नी के साथ ब्रह्मचारी के व्यवहार के विषय में मनुस्मृति में कहा गया है कि यदि गुरू की पत्नी सजातिया है, तो वह गुरू के समान ही पूजनीय है। यदि असवर्णा है तो केवल प्रत्युत्थान और अभिवादन करना चाहिए–

गुरूवत्प्रतिपूज्याः स्युः सवर्णा गुरूबाधितः।
असवर्णास्तु संपूज्याः प्रत्युत्थानभिवादनः।।[32]

इतना अवश्य है कि गुरू पत्नी का उबटन लगाना, स्नान कराना, देह दवाना और बाल बांधना कार्य नहीं करने चाहिए।[33] मनु का कहना है कि युवाशिष्य युवती गुरू पत्नियों को अपने नाम का उच्चारण करता हुआ विधिवत् प्रणाम करे। देशान्तर से आकर शिष्य शिष्ट पुरुषों के अनुसार बायें हाथ से बायें और दाहिने हाथ से दाहिने पैर को छूता हुआ प्रतिदिन गुरू का अभिवादन करें।[34]

गुरू सेवा के फल को बतलाते हुए मनु ने कहा है कि जिस प्रकार फावड़े से जमीन को खोदता हुआ मनुष्य जल को पा जाता है, उसी प्रकार गुरू की सेवा करता हुआ शिष्य भी गुरू के पास रहने वाली विद्या को पा जाता है–

यथा खननखुनित्रेण नरो कार्यधिगच्छति।
तथा गुरूगतां विद्यां श्रुश्रूशरधिगच्छति।।[35]

मनु के अनुसार उत्तम विद्या को नीच से भी ले लेना चाहिए। चाण्डाल से भी मोक्ष धर्म की शिक्षा लेनी चाहिए।[36]

मनुस्मृति के अनुसार आपत्तिकाल में अब्राह्मण से भी पढ़ने का विधान है, किन्तु ऐसे गुरू की सेवा अध्ययन काल तक ही करनी चाहिए।[37] इसके साथ ही साथ ब्राह्मणेत्तर गुरू के पास शिष्य अत्यन्त वास न करे। परम गति को चाहने वाला शिष्य वेद–वेदान्त की शिक्षा न देने वाले ब्राह्मण के पास भी न रहे। यदि गुरू के पास अत्यन्त वास करने की इच्छा हो, तो गुरू के शरीर त्याग पर्यन्त उनकी सेवा करे।[38] मनु ने कहा है कि गुरू शरीर त्याग तक जो गुरू की सेवा करता है वह श्रेष्ठ ब्रह्मलोक का प्राप्त करता है–

आसमाप्ते षरीरस्य यस्तु षुश्रूशते गुरूम्।
स गच्छत्यंजसा विप्रो ब्रह्मणः सद्म षाष्वतम्।।[39]

गुरू दक्षिणा के विषय में मनु ने कहा है कि व्रत समाप्ति के पश्चात् गुरू से आज्ञा लेकर उन्हें यथा शक्ति दक्षिण दे। दक्षिणा में भूमि, सोना, गौ, घोड़ा, जूता, आसन, धान्य, शाक और वस्त्र गुरू की प्रसन्नता के लिए दे।[40]

समग्र रूप में का निष्कर्ष यह है कि मनुस्मृति में स्मृतिकार मनु ने ब्रह्मचर्य आश्रम का अत्यन्त स्पष्ट एवं विशद् विवेचन प्रस्तुत किया है। स्मृतिकार ने ब्रह्मचर्य आश्रम के समय, विधि–विधान तथा गुरू के आश्रम में रहकर ब्रह्मचारी के द्वारा पालनीय कर्मों का सांगोपांग एवं सुस्पष्ट प्रतिपादन किया है। ब्रह्मचारी के दैनिक कर्मों की जितनी विशद् मीमांसा मनुस्मृति में देखने को मिलती है, उतनी अन्य किसी भी धर्मशास्त्र में दृष्टिगोचर नहीं होती। वस्तुतः यह स्मृति ब्रह्मचर्य आश्रम में रत ब्रह्मचारी के दैनिक कार्यों को प्रस्तुत करने वाला भारतीय संस्कृति का अनूठा दर्पण है।

याज्ञवल्क्य ने ब्रह्मचर्य आश्रम में ब्रह्मचारी के लक्षणों को बतलाते हुए कहा है कि अध्यापन योग्य वही ब्रह्मचारी होता है जो कृतज्ञ अर्थात् उपकार का स्मरण करने वाला, द्रोह रहित, मेधावी, पवित्र कल्प अर्थात् आधि–व्याधि रहित, अनसूयक, सदाचारी, साधु, समर्थ अर्थात् शास्त्र श्रवण में उपयुक्त, आप्त बन्धुओं से छल न करने वाला, ज्ञान देने वाला तथा अर्थ देने वाला हुआ करता है।

कृतज्ञा द्रोहमेधविषुचिकल्यानसूयकाः।
अध्याप्या धर्मतः साधुषक्ताप्तज्ञानवित्तदाः।।[41]

याज्ञवल्क्य के अनुसार ब्रह्मचारी को दण्ड, कृष्ण मृगचर्म, यज्ञोपवीत और मेखला धारण करनी चाहिए।[42] भारतीय धर्मशास्त्रों में ब्रह्मचारी के दो भेद बताये गए हैं। उपकुर्वाणक और नैष्ठिक। शरीरान्त तक ब्रह्मचारी का संकल्प लेने वाला ब्रह्मचारी नैष्ठिक कहलाता है। नैष्ठिक ब्रह्मचारी के विषय में याज्ञवल्क्य ने कहा है कि नैष्ठिक ब्रह्मचारी आचार्य के समीप रहे। आचार्य के अभाव में उसके पुत्र के पास रहे। उसके भी न रहने पर आचार्य पत्नी के पास रहे। इस प्रकार विजितेन्द्रिय होकर शरीर को क्षीण करता हुआ ब्रह्मचारी ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है और फिर संसार में उत्पन्न नहीं होता।[43]

ब्रह्मचर्य के काल के विषय में याज्ञवल्क्य ने कहा है कि प्रत्येक वेद के अध्ययन के लिए बारह वर्षों या पाँच वर्ष का ब्रह्मचर्य होता है। कुछ लोगों की मान्यता है कि विद्या ग्रहण के अन्त तक का काल ब्रह्मचर्य है।[44] ब्रह्मचारी की शुद्धता के विषय में याज्ञवल्क्य ने कहा है कि ब्रह्मचारी सदा व्रती ही रहता है। आचार्य, माता–पिता और उपाध्याय के शव को ढोने के बाद भी यह व्रती अर्थात् ब्रह्मचारी ही रहता है। परन्तु उसके अशौच के अन्न को नहीं खाना चाहिए तथा अशौच वालों के साथ नहीं रहना चाहिए।[45]

इति।

संदर्भ–

1. मनु स्मृति, 2/36
2. वही, 2/41
3. मनु स्मृति, 2/42
4. वही, 2/44
5. वही, 2/45–47
6. मनु स्मृति, 2/48
7. वही, 2/49
8. वही, 2/50
9. वही, 2/51
10. वही, 2/60, 62
11. मनु स्मृति, 2/65
12. वही, 2/105
13. वही, 2/107
14. वही, 2/109
15. मनु स्मृति, 2/119
16. वही, 2/169–171
17. वही, 2/172–174
18. मनु स्मृति, 2/176
19. वही, 2/177
20. वही, 2/179
21. मनु स्मृति, 2/181, 182
22. वही, 2/183
23. वही, 2/186
24. वही, 2/188
25. वही, 2/192
26. मनु स्मृति, 2/192–197
27. मनु स्मृति, 2/199
28. वही, 2/200, 201
29. वही, 2/205–207
30. मनु स्मृति, 2/208
31. वही, 2/209
32. वही, 2/210
33. वही, 2/211
34. मनु स्मृति, 2/216, 217
35. वही, 2/218
36. वही, 2/238
37. मनु स्मृति, 2/241
38. वही, 2/242, 243
39. वही, 2/244
40. मनु स्मृति, 2/45, 246
41. याज्ञ0 आ0, 28
42. वही, 29
43. याज्ञ0 आ0, 49, 50
44. याज्ञ0 आ0, 36
45. याज्ञ0 प्रायश्चिताध्याय, 15